SHODH SAMAGAM
ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

मनुस्मृति में प्रतिबिंबित संस्कार

पुरूषोत्तम द्विवेदी, शोधार्थी, इतिहास विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग, झारखंड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Author
पुरूषोत्तम द्विवेदी, शोधार्थी
E-mail : pd07642@gmail.com

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 15/01/2026
Revised on : 16/03/2026
Accepted on : 25/03/2026
Overall Similarity : 00% on 17/03/2026

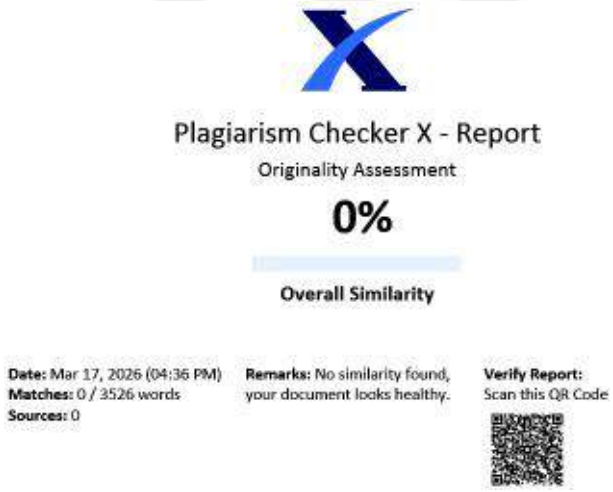

शोध सार

भारत अपनी संस्कृति एवं सभ्यता के लिए जाना जाने वाला एक महान देश है। इस देश में साहित्य, कला एवं विज्ञान के साथ ही अपने अनेक विधि संहिताओं, स्मृतियों, ब्राह्मणों, उपनिषदों तथा दर्शन द्वारा सम्पूर्ण चराचर जगत का कल्याणकारी योगदान के कारण आज भी जाना जाता है। एक तरफ जहां पर वेदों में हमें ज्ञान, कर्म, उपासना तथा विज्ञान की बातों को बताया गया है वहीं उपनिषदों में मोक्ष मार्ग तथा स्मृतियों में धर्म शास्त्रकारों ने मानव जीवन के लिए उन्नत विधियों का तथा जीवन को प्रगतिशील बनाने वाले संस्कारों में मानवधर्म के मापदण्डों के द्वारा राष्ट्र को सुव्यवस्थित बनाने का कार्य किया है जिससे राष्ट्र अपने विकास की निरंतरता को बनाये रखने में सफल रहे। मनुस्मृति में मनु ने मनुष्य के जन्म से मृत्यू तक के सभी संस्कारों का वर्णन किया है जिसके माध्यम से सभी प्रकार के वर्गों का सत्यता बनी रहे। इस प्रकार देखा जाए तो महर्षि ने मनुस्मृति के माध्यम से संस्कारों को बताया है जिसमें व्यक्ति के चारित्रिक के साथ ही राष्ट्र निर्माण के मूलमंत्रों दर्शाया है। अतः मनु ने मानव के मानवीय मुल्यों को संस्कारों के माध्यम से बताने का कार्य किया है। इस ग्रंथ में अनेक विषयों से जुड़ी बातें हैं परन्तु प्रस्तुत शोध पत्र मे ''मनुस्मृति में प्रतिबिंबित संस्कार'' लिया है जिसको कई भागों में बांटकर अध्ययन किया जायेगा।

मुख्य शब्द

ब्राह्मण ग्रंथ, मनुस्मृति, दर्शन.

भूमिका

धर्मसूत्रों के बाद मनुस्मृति, याज्ञवलक्य स्मृति, वृहस्पति स्मृति, नारद स्मृति, परासर स्मृति एवं देवत स्मृति आदि स्मृतियों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। प्राचीन काल में मनु, याज्ञवलक्य आदि ने इस समस्त

भुमण्डल की नैतिकता, सांस्कृतिकता तथा इसकी व्यवहारिकता का जो विस्तारपूर्ण वर्णन अपने ग्रंथों में किया है, उन्हें ही स्मृति नाम से जाना जाता है। महर्षि मनु ने संस्कार में सभी वर्गों के हितों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है चाहे भले ही वह किसी भी वर्ग का हो इसलिए मनुस्मृति में वर्णित संस्कार आज भी अपना अति महत्वपूर्ण स्थान बनाये हुए है मनुस्मृति को सभी स्मृतियों का मूल माना जाता है, क्योंकि मनुस्मृति सभी स्मृतियों में सबसे अधिक प्राचीन है, वेदों में भी मनु का उल्लेख प्राप्त होता है जिसमें ऋगवेद में मनु को मानव जाति का पिता माना जाता है। इसके अतिरिक्त मनु का उल्लेख तैतरिय संहिता एवं ताडय महाब्राह्मण में मनु को वचनों को औषधि के समान माना गया है।

मनुस्मृति के रचना काल को लेकर तमाम मतभेद है फिर भी मनुस्मृति का रचनाकाल लगभग 200 ई. पू. से 200 ई. के मध्य माना जाता है। सम्पूर्ण मनुस्मृति बारह अध्यायों में विभक्त है, बारह अध्यायों में सृष्टि की उत्पत्ति, धर्म की परिभाषा तथा विवेचन, संस्कार विधि, ब्रह्मचारी के कर्तव्य गृहस्थाश्रम का वर्णन, भक्षय तथा अभक्ष्य पदार्थों का निर्णय, वानप्रसथ कर्तव्य, राजधर्म, राजनैतिक तथा सामाजिक व्यवस्था, पति–पत्नी के कर्तव्य, दाय भाग, चारों वर्णों के कर्तव्य, विभिन्न पापों का प्रायश्चित वैदिक कर्म की श्रेष्ठता और मोक्षप्राप्ति का वर्णन किया गया है। मनुस्मृति के द्वितीय अध्याय में संस्कार विधि का वर्णन किया गया है। संस्कार शब्द का मूल अर्थ है शुद्धिकरण। मूलतः संस्कार का अभिप्राय हम उन धार्मिक कर्तव्यों से था जो किसी व्यक्ति को अपने समुदाय का पूर्ण रूप से योग्य सदस्य बनाने के उद्देश्य से उसके शरीर, मनु और मस्तिष्क को पवित्र करने के लिए किये जाते थे, किन्तु हिन्दू संस्कारों का उद्देश्य व्यक्ति अच्छे गुणों को उत्पन्न करना था।[1] संस्कारों के द्वारा ही मनुष्य अपनी सहज प्रवृतियों का पूर्ण विकास कर अपना और समाज दोनों का हित करता है। ये संस्कार इस जीवन में ही नहीं बल्कि पारलौकिक जीवन को भी पवित्र बनाते हैं।

संस्कारों के उद्देश्य की बात करें तो यह दो प्रकार का माना जाता है एक प्रकृति को विरोधी शक्तियों के प्रभाव को दूर करना और हितकारी शक्तियों को अपने ओर आकर्षित करना था, क्योंकि प्राचीन हिन्दूओं का भी अन्य प्राचीन जातियों की भांति यह विश्वास था कि मनुष्य कुछ आदि मानव प्रभावों से घिरा हुआ है, इस प्रकार वह बुरे प्रभाव को दूर करके और अच्छे प्रभाव को आकर्षित करके देवी–देवताओं और इन आदि मानव शक्तियों की सहायता से समृद्ध और सुखी रहेगा। संस्कारों के द्वारा वे पशु, संतान, दीर्घायु, सम्पत्ति और समृद्धि की आशा करते थे।[2] संस्कारों के द्वारा मनुष्य हर्षोल्लास को अभिव्यक्त करता था अर्थात् तीव्र बुद्धि की प्राप्ति हेतु ब्राह्मण को पांच बलवान क्षत्रिय का छः और वैश्य का आठ वर्ष की अवस्था में यह संस्कार करने का विधान है।

शोध विधि

शोध विधि मुख्य रूप से ऐतिहासिक विश्लेषणात्मक, विवरणात्मक तथा व्याख्यात्मक है। तथ्यों के संग्रहण हेतु प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों का सहारा लिया गया है।

व्यास और सांख्यायन ने सोलह संस्कार बनाए हैं मनुस्मृति में तेरह संस्कारों का उल्लेख है। संस्कारों की संख्या के बारे में सभी धर्मशास्त्रियों की एक राय नहीं है। संस्कारों की महत्ता को ध्यानगत रखते हुए 16 महत्वपूर्ण संस्कारों को बताया गया है।[3] 1. गर्भाधान, 2. पुंसवन 3. सीमान्तोन्नयन 4. जातकर्म 5. नामकरण 6. निष्क्रमण 7. अन्नप्राशन 8. चूड़ाकर्म 9. कर्णवेधन 10. विद्यारम्भ 11. उपनयन 12. वेदारम्भ 13. केशान्त 14. समावर्तन 15. विवाह 16. अन्तयेष्टि।[4]

1. **गर्भाधान संस्कारः** यह संस्कार श्रेष्ट संतान उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। इस संस्कार का प्रचलन वैदिक काल से माना जाता है, इसको सम्पन्न करते वक्त समय एवं वातावरण का ध्यान रखा जाना अति महत्वपूर्ण स्थान होता है क्योंकि इसके लिए स्त्री का ऋतुकाल में होना जरूरी होता है। यह ऋतु स्नान के बाद चौथी रात्रि से सोलहवीं रात्रि तक गर्भधारण के लिए उपयुक्त समय अवधि मानी गई है। इसके लिए अर्द्धरात्रि के बाद का समय उपयुक्त तथा दिन का समय निषेध माना जाता है।[5] पुत्र की इच्छा रखने वालों के लिए सम.... रात्रियों में स्त्री गमन का विधान किया गया है। इस प्रकार देखें तो गर्भाधान संस्कार का उद्देश्य स्वस्थ, सुशील लक्ष्य सुन्दर संतान के जन्म से है।[6] कुछ शास्त्रकारों ने निषेक (ऋतुसंगम), चतुर्थ कर्म अथवा

चतुर्थी .... नाम से भी इसे बुलाया है।

2. **पुंसवन संस्कारः** पुंसवन का शाब्दिक अर्थ है पुत्र प्रप्ति की इच्छा व्यक्त करना। यह संस्कार गर्भाधान संस्कार के दूसरे या तीसरे महिने में सम्पन्न होता था। इस संस्कार के माध्यम से पति–पत्नी पुत्र की प्राप्ति हेतु देवताओं की स्तुति तथा कुछ औषधियों का प्रयोग करते थे। पुत्र संतान के लिए यह पुष्प नक्षक्ष उपयुक्त तथा मंगलकारी माना जाता है। हिन्दू परिवार में पुत्र की महत्ता को ध्यान में रखकर यह संस्कार पुत्र उत्पन्न होने वाले बाधाओं का निवारण किया जाता था जैसा कि पुराणों में भी तेजस्वी पुत्र की प्राप्ति हेतु इस संस्कार की महत्ता बताया गया है।[7]

3. **सीमान्तोन्नयनः** इस संस्कार से ईश्वर द्वारा अच्छी सन्तान की प्राप्ति तथा मुख्यतः गर्भवती महिला को प्रसन्न रखने से था। यह संस्कार गर्भिणी स्त्री के गर्भ की बुरी यादुष्ट शक्तियों से रक्षा हेतु किया जाता है क्योंकि ऐसा माना जाता है कि गर्भिणी महिलाओं पर अनेक बाधाऐं आती रहती है। हिन्दू शास्त्रकारों के अनुसार यह गर्भ में आयोजित किया जाने वाला संस्कार है। इस संस्कार में अपने पितरों की पूजा के साथ ही श्रेष्ठजनों से आर्शिवाद लिया जाने का प्रावधान होता है अतः गर्भिणी स्त्री के सुख तथा सांतवना के लिए अति महत्वपूर्ण माना जाता है।[8]

4. **जातकर्मः** यह बाल्यावस्था का संस्कार है मनु ने नाभिभेद के पहले जातकर्म करने की बात कही है। मंत्रोच्चारण के साथ शिशु को घी तथा मधु का स्पर्श कराया जाता है। अनिष्टकारी शक्तियों से रक्षा के लिए पुत्र जन्म के समय जातकर्म संस्कार सम्पादित किया जाता था। इसमें मनु के अनुसार नाभिछेदन के पहले जातकर्म सम्पन्न किया जाता है। इसमें पिता द्वारा विधि पूर्वक स्नान आदि करने के बाद अपने पितरों की पूजा अर्चना तथा श्रेष्ठजनों का आर्शिवाद लेना तथा पुत्र को स्पर्श करने की बात कही गयी है। ऐसा माना जाता है कि गहड़वाल नरेश जयचन्द्र ने अपने पुत्र हरिशचन्द्र के जातकर्म के शुभ अवसर पर पुरोहित प्रध्राजशर्मन के वदेसर ग्राम दान में दिया जाने का उल्लेख मिलता है[9] अर्थात् इस संस्कार में दान का भी प्रावधान दिखाई देता है।

5. नामकरणः वर्ण के अनुसार सूचक शब्दों के साथ नामकरण की बात की जाती है। मनु के अनुसार नाम सार्थक होना चाहिए। व्यक्ति अपने नाम से ही समाज में जाना पहचाना जाता है और इसी के अनुसार व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है जिसके लिए एक मंगल घड़ी में देवपूजन और यज्ञ का प्रावधान होता है।[10] इस संस्कार का उल्लेख हमारे धर्मशास्त्रों में भी विस्तारपूर्वक वर्णन दिखायी देता है। मनु ने दसवें या बारहवें दिन शुभ तिथी, नक्षत्र और मुहुर्त में नामकरण संस्कार का आयोजन किये जाने का उल्लेख करते हैं। सुन्दर शोभनिय तथा सुनने में अच्छे लगने वाले नाम अच्छे माने जाते हैं। देवता नाम, मास नाम, नक्षत्र और व्यवहारिक नाम संतान को प्रदान किये जाते थे।[11] जहां एक तरफ मनु ने स्त्री का नाम सुखपूर्वक उच्चारण योग्य, अक्रुर तथा स्पष्ट मनोहर तथा मंगलसूचक बताया है वहीं दुसरी तरफ पुरूष नाम में ब्राह्मण का नाम मंगलसूचक, क्षत्रिय बलसूचक वैश्य का धन सूचक तथा शुद्र का निन्दा सूचक बताया है।

6. **निष्क्रमणः** संतान के जन्म के बाद पहली बार शिशु को कृत्रिम वातावरण से प्राकृतिक वातावरण में प्रवेश कराया जाता है। मनु ने बालक का निष्क्रमण संस्कार प्रायः तीसरे और चौथे मास में बताया है। यह संस्कार जन्म के बारहवें दिन सं चौथे मास तक सम्पन्न हो जाता था।[12] यही संतान का सम्पर्क मानवीय वातावरण से प्राकृतिक वातावरण में लाया जाता है तथा सूर्य एवं चन्द्र दर्शन कराया जाता है तथा स्वच्छन्द विकास पर बल दिया जाता है।[13]

7. **अन्नप्राशन्नः** यह संस्कार शिशु के छठे मास में कराया जाता है। इस संस्कार के द्वारा उसे अन्न ग्रहण कराया जाता है। शिशु के जन्म के पांच छः मास पश्चात् मां का दूध कम होने के साथ ही शिशु के विकास को ध्यान में रखकर यह संस्कार सम्पन्न कराया जाता है तथा सर्वप्रथम बच्चे को अन्न ग्रहन कराया जाता है।[14]

8. **चुड़ाकर्मः** इसे केशछेदन संस्कार भी कहते हैं। धर्मशास्त्रों में इसका मुख्य प्रयोजन दीर्घआयु, सौन्दर्य तथा

कल्याण की प्राप्ति है। मनु ने इसे जन्म के प्रथम या तीसरे वर्ष सम्पन्न करना उचित बताया है। हिन्दू समाज में आज भी मुंडन संस्कार का आयोजन बड़े ही आहलाद और प्रसन्नतापूर्वक किया जाता है तथा ब्राह्मणों और निर्धनों को भोजन तथा दान दिया जाता है।[15] इस संस्कार के माध्यम से बालक को शरीर की स्वच्छता और पवित्रता का ज्ञान कराया जाता है।

9. **कर्णवेध या कर्णछेदनः** हिन्दू संस्कारों में इसे वैदिककालीन माना जाने वाला संस्कार है। यह संस्कार शिशु को शोभा और अलंकरण के उद्देश्य से किया जाने वाला है। यह संस्कार सन्तान जन्म के सातवें महिने किया जाता था। इस संस्कार में वर्णों के अनुसार अलग–अलग धातु की सुइयों का कर्णछेदन हेतु प्रयोग किया जाने का उल्लेख मिलता है।[16] आधुनिक समय में यह मुंडन संस्कार के साथ सम्पादित किया जाने लगा है और अब धीरे–धीरे हिन्दू समाज में इसकी महत्ता कम होती जा रही है।

10. **विद्यारम्भः** यह संस्कार तीसरे या पांचवें वर्ष में सम्पन्न किया जाता है जो उपनयन संस्कार के बाद सम्पन्न किया जाता है। शुभ मूहर्त को देखकर शिक्षक द्वारा 'ओम्' और स्वास्तिक के साथ वर्णमाला को लिखकर बालक को अक्षर ज्ञान कराया जाता था। इस अवसर पर गणपति सरस्वती तथा गृह देवता का पूजा–याचना की किया जाता था। इसमें बालक को पूरब की तरफ मुख करके अक्षर का आरम्भ कराया जाता था। इसके बाद गुरू को वस्त्र, धन, आभूषणों आदि का भेंट प्रदान किया जाता था।[17] यह संस्कार बालक के बौद्धिक उत्थान के साथ ही मानसिक गुण को मजबूत होकर सामने उपस्थित होने की कामना हेतु किया जाता था।

11. **उपनयनः** उपनयन के लिए यज्ञोपवित्र शब्द का प्रचलन हुआ, जिसका अर्थ यज्ञ के उपवीत से है। इस संस्कार के माध्यम से व्यक्ति अपने वर्ण या जाति का सदस्य बनता है और द्विज कहलाता है।[18] यह जीवन के नियम और अनुशासन को सिखता है। इसका मुख्य उद्देश्य वेदों का अध्ययन बताया गया है।

    गौतम और मनु ऋषि ने ब्राह्मण वर्ण के बालक के लिए गर्भ के आठवें वर्ष क्षत्रिय बालक का गर्भ से ग्यारहवें वर्ष और वैश्य वर्ण के बालक का यज्ञोपवित्र जन्म के बारहवें वर्ष कराने का प्रावधान बताया है।[19] ब्राह्मण की कम आयु में यज्ञोपवित्र का कारण ब्राह्मण परिवार की शिक्षा को बताया गया है क्योंकि पिता प्रायः आचार्य होते थे।

    मनु ने ब्राह्मण का यज्ञोपवित कपास का क्षत्रिय का सन का और वैश्य का ऊन का बना हुआ तीन लड़ी का होता था। यज्ञोपवित के तीन धागे सत् रज और तम गुणों के प्रतीक थे जो बालक को ऋषि ऋण, देवऋण और पितृऋण का भी स्मरण दिलाते थे। बालक को सूर्य दर्शन कराया जाता था जो विद्यार्थी की कर्तव्य परागणता और अविचलित स्वरूप का प्रतीक माना जाता था।[20]

12. **वेदारम्भः** गुरू के सानिध्य में रहकर शिष्य का वेदध्ययन प्रारम्भ करना जिससे शिष्य का बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास हो सके। मनु ने शास्त्र निमित्त वेदों के अध्ययन करने की बात कहते हैं और शिष्य वेदारम्भ और अन्त में ओम् शब्द के उच्चारण की बात भी कहते हैं क्योंकि ओम् के उच्चारण से अध्ययन नष्ट नहीं होता है।[21]

13. **केशान्तः** इसको गोदान नाम से भी जाना जाता है क्योंकि इसे संस्कार के मंगलमय अवसर पर ब्राह्मण आचार्य को गोदान दिया जाता था। यह संस्कार विवाह पूर्व सम्पन्न किया जाता था। मनु ने गर्भ के सोलहवें वर्ष ब्राह्मण, बाइसवें वर्ष क्षत्रिय तथा चौबीसवें वर्ष वैश्य का केशान्त संस्कार सम्पन्न कराने की बात करते हैं। इस संस्कार में दाढ़ी का पहली बारक्षौर कर्म किया जाता है। दाढ़ी–मुंछों का उगना तरूणाई का लक्षण माना जाता है।[22] अतः इस क्रिया के माध्यम से युवा व्यक्ति को ब्रह्मचर्य तथा सदाचरण का याद दिलाया जाता है।

14. **समावर्तनः** जब ब्रह्मचारी अपनी शिक्षा समाप्त होने पर अपने घर की ओर प्रस्थान करता है उसे समावर्तन संस्कार माना जाता है जिसका कोई निश्चित आयु निर्धारण नहीं किया गया है। समावर्तन शब्द का शाब्दिक अर्थ ही गुरूकुल से शिक्षा ग्रहण करने के बाद घर की ओर लौटना है। इस संस्कार के लिए एक शुभ दिन को चयन कर सम्पन्न किया जाता था स्नान और पूजा–पाठ के सम्पन्न हो जाने पर गुरू द्वारा अपने शिष्य

(नव–स्नातक) हेतु अधिकाधिक शिष्य की प्राप्ति होने का आर्शिवाद देता है[23] और नवस्नातक गुरू का आर्शिवाद प्राप्त कर अपने गृह की ओर प्रस्थान करता है।

15. **विवाहः** विवाह संस्कार समस्त संस्कारों में अपना अतिमहत्वपूर्ण स्थान रखता है जिससे व्यक्ति की नयी सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति प्रारंभ होती है। व्यक्ति का गृहस्थाश्रम में प्रवेश विवाह–संस्कार से ही होता है। इस संस्कार में व्यक्ति का व्यक्तिगत जीवन समाप्ति के साथ ही सामाजिक जीवन की शुरूआत होता है और अब व्यक्ति का परिवार और समाज के प्रति नये दायित्व प्रारंभ होते हैं जिनके प्रति कार्यशील होता है। विवाह के अंतर्गत वर–वधु की गुण, गोत्र एवं योग्यताओं आदि पर विचार किया जाता है। विवाह संस्कार को कई प्रकार के कर्मकांडों द्वारा सम्पन्न कराया जाता है।[24] प्रायः ऐसा माना जाता है कि इसमें लगभग तीस अनुष्ठान सम्पन्न किये जाते हैं।

    विवाह के उद्देश्य का मूल उद्देश्य संतानोत्पति के साथ ही सामाजिक और धार्मिक कार्यों का निर्वहन भी था। यह एक ऐसा संस्कार है जिसमें (दो लोग) वर–कन्या सात जन्म तक एक साथ रहने का वचन देते हैं। इसी संस्कार के माध्यम से हम, ऋषि, देव एवं पितृ ऋण से उरिण या पालन करने का कार्य सम्पन्न करते हैं। यह पुरूषार्थ का मूल है।[25] धर्म, अर्थ और काम इसी संस्कार पर निर्भर है।

16. **अन्तेष्टिः** यह जीवन का अन्तिम संस्कार माना जाता है क्योंकि इसी संस्कार के माध्यम से व्यक्ति मृत होने के बाद परलोक में शान्ति का लाभ करेगा।

बौद्धायन ने बताया है कि जन्म के बाद संस्कारों के द्वारा मनुष्य इस लोक का विजय प्राप्त करता है जबकि मृत्युपरान्त संस्कारों के माध्यम से परलोक को विजित करता है अर्थात् परलोक में अपना अच्छा स्थान प्राप्त करता है। मृत शरीर के शवदाह का क्रिया किया जाता है जिसके बाद 12 से 16 दिनों तक लगभग अशौच (सूत्तक/अशुद्ध) स्थिति में रहते हैं।[26] शुद्धि (कर्मकांड) के बाद शान्ति और श्राद्ध का कार्य किया जाता है। सपीण्डी करण श्राद्ध के बाद मृतकों को पितरों से मिला दिया जाता है। देखा जाए तो तर्पण और श्राद्ध जैसी धार्मिक क्रिया प्रत्येक वर्ष नियत तिथि या किसी विशेष दिन का चयन कर सम्पन्न किया जाता है। वर्णों के अनुसार अशौच का समय निर्धारण किया गया है आज भी शवदाह के बाद अशौच, पिंडदान, श्राद्ध, ब्राह्मण–भोजन आदि कार्यों का प्रचलन समाज में बना हुआ है।[27]

इस प्रकार देखें तो हम पाते हैं कि हिन्दू जीवन का क्रमिक विकास कहीं न कहीं संस्कारों का लक्ष्य रहा है जिसके माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास अर्थात् मनुष्य का चरित्र और आचरण संस्कारों से प्रभावित होकर सन्मार्ग की तरफ अग्रसर होता है जैसा कि व्यक्ति से परिवार, परिवार से समुदाय तथा समुदाय से समाज बनता है। यही नहीं सभी संस्कारों से व्यक्ति का परिवार और समाज से सम्पर्क अत्यंत घनिष्ट होता है जो उसके सामाजीकरण का परिचायक है।[28] मनुष्य के जैविकीय समस्या का समाधान संस्कारों (विवाह संस्कार) से होता है। प्रत्येक स्तर से संस्कारों की नियमबद्धता द्वारा व्यक्ति को सामाजिक, धार्मिक नैतिक और आध्यात्मिक आदि प्रकार की शिक्षाऐं मिलती है तथा साथ ही क्षमा, दया, दान, पवित्रता, सच्चरित्रता, अस्तेय, अहिंसा जैसे गुणों से परिचित होता है, साथ ही संस्कार के माध्यम से मनुष्य की आत्माभिव्यक्ति हर्ष, शोक, दया, क्रोध, सहानुभुति आदि संस्कारों के माध्यम से ही संचालित होते हैं।[29]

हिन्दू जीवन में संस्कार जीवन की वह कुंजी है जिससे व्यक्ति के सर्वांगिक व्यक्तित्व के विकास तथा उसके जीवन को परिपूर्ण कर सामाजिक और धार्मिक के साथ आचरण को परिष्कारित कर व्यक्ति के लौकिक जीवन के साथ उसके पारलौकिक जीवन का मार्ग प्रशस्त करता है।[30] वस्तुतः संस्कारों के योग के माध्यम से ही मनुष्य का जीवन परिष्कृत और परिशुद्ध होता है। साथ ही व्यक्ति से परिवार तथा परिवार से समाज तक की यात्रा तय करता है जैविकीय विकास क्षेत्र में भी गर्भाधान तथा पुंसवन आदि ऐसे संस्कार हैं जिससे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की शिक्षा तथा ब्रह्मचर्य आश्रम व्यक्ति ज्ञान और शिक्षा क्षेत्र में कार्य कर अपने जीवन को पवित्र और शुद्ध बनाने का कार्य के साथ ही व्यक्ति के सामाजिक, धार्मिक, नैतिक आध्यात्मिकता के साथ ही व्यक्ति के अनुशासित ढंग से जीवन का विकास करता है।[31] क्षमा, दया, दान, पवित्रता, सच्चरित्रता, अस्तेय, अहिंसा आदि जैसे सांस्कृतिक और नैतिक

कार्यों का समायोजन करता है। आध्यात्मिकता के माध्यम से शुभ, अशुभ शक्तियों का ज्ञान प्राप्त करता है और हर्ष, शोक, दया, क्रोध, सहानुभूति आदि के माध्यम से अपने भावों को व्यक्त करना सिखता है।

निष्कर्ष

संस्कार वर्ण–धर्म तथा आश्रम–धर्म का आधार स्तम्भ है जो मनुष्य के सामाजीकरण व्यक्ति के क्रमिक विकास का व्यवस्थित, अनुशासित, एकनिष्ठ और समग्र रूप है। व्यक्ति सामाजिक और सांस्कृतिक उन्नति के साथ–साथ अपने नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक मूल्यों एवं प्रतिमानों को शसक्त बनाने में सफल होते हैं। अतः संस्कार के माध्यम से ही व्यक्ति को जीवन में गतिशिलता तथा मनुष्य के विभिन्न कार्यों को जीवन्त और प्राणवान बनाता है।

वर्तमान वैश्वीकरण के दौर तथा पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में आज संस्कारों की गति में कमी आयी है। यदि देखा जाए तो मुंडन, उपनयन, विवाह और अन्तयेष्टि संस्कारों को छोड़कर अन्य हिन्दू संस्कारों में लोप होता हुआ दिखाई दे रहा है। आज के इस परिवर्तनशील, विज्ञानपरक और भौतिकवादी समाज में संस्कारों का महत्व नाममात्र का रह गया है।

संदर्भ सूची

1. सरस्वती, दयानंद (1877) *संस्कार विधि,* आर्य साहित्य प्राचार्य ट्रस्ट, दिल्ली, पृ. 110–145।
2. काणे, पांडुरंग वमन (1930) *धर्मशास्त्र का इतिहास,* (Vol - 2) भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च संस्थान, पुणे, पृ. 196–205।
3. पांडे, राजबली (1969) *हिंदू संस्कार,* मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, पृ. 1–25।
4. उपर्युक्त, काणे, पृ. 197–200।
5. वुहलर, जॉर्ज (अनु.) (1886) *मनुस्मृति,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, यू. के., पृ. 90–92।
6. शर्मा, आर के. (अनु.) (1981) *चरक संहिता,* चौखंभा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, पृ. 452 –456।
7. शास्त्री, जे एल (अनु.) (1978) *गरुण पुराण,* मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, पृ. 230–235।
8. ओल्डेनवर्ग, हरमन (अनु.) (1886) *गृहसूत्र,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, यू. के., पृ. 38–41।
9. नियोगी, रोमा (1959) *गढ़वाल साम्राज्य का इतिहास,* कोलकाता विश्वविद्यालय, कोलकाता, पृ. 120–123।
10. उपर्युक्त, काणे, पृ. 377–385।
11. उपर्युक्त, पांडे, पृ. 110–115।
12. वही, पांडे, पृ. 76–80।
13. उपर्युक्त, काणे पृ. 355–358।
14. उपर्युक्त, पांडे, पृ. 105–108।
15. दीपशिखा एवं राय, अमित कुमार, (2014) *चाइल्डहुड संस्कार इन लाइट आफ कंटेंपरेरी साइंस,* (Vol - 2 मार्च अप्रैल) वेद माता गायत्री, हरिद्वार, पृ. 3–8।
16. शर्मा, शिवानी एवं कुमार, राजेश (2016) कल्चरल एंड मेडिकल इंपोर्टेंस ऑफ चाइल्डहुडः संस्कार, *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च एंड एनालिटिकल रिव्यूज,* हरिद्वार, 4(11)475–480।
17. शुक्ला, आशी एवं शर्मा, वंदना (2026) इंडियन संस्कार एंड एजुकेशन : ए साइंटिफिक पर्सपेक्टिव ऑन पर्सनैलिटि डेवलपमेंट. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ वर्सेटाइल रिसर्च एंड एनालिसिस,* 4, 13–14, जयपुर।

18. भाटिया, रमेश; अडिग, सरिता; गुहा, निर्मला और वर्गमन बिल, मुगम सब्सटेंस प्रिडिक (2023) देव संस्कृति, *इंट्रडिसीप्लिनरी इंटरनेशनल जर्नल,* 23(15) 4–5, हरिद्वार।

19. राय, एम. (2020) कल्चरल सिग्निफिकेन्स ऑफ द सेक्रेट सेरेमनी, *जनरल ऑफ कल्चरल स्टडी,* लंदन, 34(2) 133– 148।

20. प्रसाद, आर. सी. (1987) *द उपनयनः द हिंदू सेरेमनी ऑफ सेक्रेट,* मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पृ. 66–67

21. कुमार, शोभित (2017) अ क्रिटीकल अपरासियल आन भैरियस संस्कार, *इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ आयुर्वेदा एण्ड फार्मा रिसर्च,* कन्नूर –केरल, 5(10) 3–4।

22. तुलसी, चंद्र सौरभ; जैस्मिन, (2025) ए कंम्परेटिव स्टडी ऑफ आयुर्वेदिक एंड मॉडर्न पर्सपेक्टिव ऑन हॉलिस्टिक हेल्थ एंड प्रीवेंटिव मेडिसिन. *इन्टरनेशनल जर्नल ऑफ आयुश,* 14, 76–77, दिल्ली।

23. टाले, पीरतीलता रमेश (2020) अ क्रिटीकल रिब्यू आफ बाल संस्कार एण्ड इट्स साइंटिफिक इम्पोर्टस, *जनरल ऑफ आयुर्वेदा एण्ड इन्टीग्रेटेड मेडिकल साइंस,* 5(3) 5–6, कन्नूर।

24. कुमार, विजय एंड जायल, ज्योति (2024) वेडिंग रिचुअल्स आफ हिन्दू मैरिज, *शोधकोशः* जनरल ऑफ *विजुअल एण्ड परफार्मिंग आर्ट,* 5(7), 512–520, दिल्ली।

25. उपर्युक्त, पांडे, पृ. 215, 216।

26. वहीं, पांडे, पृ. 269–274।

27. पौडियाल, बीना घीमारे एण्ड धीमारे, विनोद (1998) *हिन्दू डेथ राइट्सः संस्कार,* सरस्वती प्रकाशन, ऋषिकेश, पृ. 17–20।

28. उपर्युक्त, पांडे, पृ. 28–30।

29. उपर्युक्त, काणे, पृ. 4–8।

30. फ्लड, गविन (1996) *एन इंट्रोडक्शन टू हिंदुइज्म,* कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, यूके, पृ. 51–58।

31. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली (1956) *द कल्चरल हेरिटेज ऑफ इंडिया,* वाल्यूम 2, रामकृष्ण मिशन इंस्टीट्यूट ऑफ कल्चर, कोलकाता, पृ. 220–226।

****